प्रथम सुरेश तेंडुलकर स्मारक व्याख्यान*

प्रोफेसर अभिजित बनर्जी

धन्यवाद गवर्नर सुब्बाराव जी, इस उदार परिचय के लिए और यह व्याख्यान देने के लिए मुझे आमंत्रित करने के लिए बहुत बहुत धन्यवाद!

प्रोफेसर तेंडुलकर का मैं बहुत बड़ा प्रशंसक रहा हूँ। वे अपने तरह के अनूठे व्यक्ति थे, बड़े ही स्पष्टवादी। जब मैं कुछ ऐसा कहता जिससे वे सहमत नहीं होते, तो वो सुनते और कह देते कि बात बेतुकी है और मुझे अपना बचाव करना होता था। अपनी बात का उनसे बचाव करना मेरे लिए हमेशा सम्मान का विषय रहा। उनकी बातों में गहराई होती थी और इस बात से उनका ध्यान कभी भटकता नहीं था कि चर्चा का विषय क्या है, एक ऐसा गुण जो प्राय: देखने में नहीं आता।

हमने भिन्न क्षेत्रों में कार्य किए। गरीबी को मापने का कार्य उनका एक बड़ा क्षेत्र था, जबकि मेरा अधिकतर कार्य इस पर था कि गरीबी से कैसे लड़ा जाए, इसे दूर करने के कौन से तरीके कारगर हैं और कौन से नहीं। सो, जिन जगहों पर हमारी राहें कुछ ज्यादा मिलती थीं वे कहा जाए तो ये थीं कि गरीब का पता कैसे लगाएं, गरीबी रेखा का निर्धारण कैसे करें। मान लीजिए, आप ने गरीबी रेखा तय कर दी और आपको मालूम ही नहीं कि वहाँ है कौन। सैंकड़ों हज़ारों गाँवों में कई सौ लाख गरीब लोग हो सकते हैं। मेरी दृष्टि में प्रश्न यह है कि उनका पता कैसे लगाएं।

मेरे वक्तव्य का अधिकांश हिस्सा इसी पर है कि कैसे हमें गरीबों के लिए कुछ करना है। उदाहरण के लिए, यह जरूरी है कि हम उनके लिए बैंक खातों की व्यवस्था करें, पर उसके बाद यदि आप जानते ही नहीं कि वे कहाँ रहते हैं, या वे कौन हैं, तो बैंक खाते उनके हाथ में वास्तव में कैसे पहुँचेंगे। हम इसी प्रश्न पर विचार करेंगे।

मेरी नज़र में यह सवाल मुश्किल है और इसकी कई वजहें हैं। केवल सर्वेक्षण कर लेने भर से गरीबों का पता नहीं लग जाता। एनएसएस जैसा सैंपल सर्वे बहुत अच्छा है जो आपको यह बताता है कि किस राज्य या जिले में गरीबों की संख्या अधिक है। पर इससे आपको यह पता नहीं लगता कि वे लोग हैं कौन। वाकई अगर आप एनएसएस के तरीके से गरीबों की पहचान करना चाहते हैं तो वास्तव में आपको एक जनगणना (सेंसस) की जरूरत है।

आप प्रत्येक व्यक्ति के पास जाएंगे या शायद शहर के अमीर इलाकों को छोड़ दें और केवल उन्हीं जगहों पर जाएं जहाँ पर गरीब रहते हैं। कई जगहों पर जाना पड़ेगा, एक एक हाउसहोल्ड से बात करेंगे, उन सभी हाउसहोल्ड्स के बारे में डेटा इकट्ठे करेंगे। कितना बड़ा काम है! तब तो और भी जब बार-बार करना हो क्योंकि आखिरकार इन्हीं गरीब लोगों में से कुछ धनी बन जाते हैं और धनी गरीब बनते हैं। मतलब इसे बार-बार करना पड़ेगा। इसलिए कोई देश ऐसा नहीं करता।

जो वे करते हैं उसका नाम है प्रॉक्सी मीन्स टेंस्टिंग या पीएमटी। यह एक तरह का सर्वे है, जनगणना-आधारित एक पद्धति। इसमें वास्तव में सर्वे की जरूरत नहीं पड़ती। मूलत: इसमें यह चिन्हित किया जाता है कि यदि आपके पास कार है तो आप गरीब नहीं हैं; इसे हम चेक कर सकते हैं। यदि ईंट का बड़ा मकान आपके पास है तो आप गरीब नहीं हैं। यानी आसानी से दिखने में आने वाली कुछ ठोस टिकाऊ चीजों की पहचान करनी है, और इनमें से कोई भी वस्तु या इनमें से कोई 5 आपके पास हैं, तो आप गरीब नहीं हैं। अधिकांश देश इसी नियम का प्रयोग कर रहे हैं और इसे प्रॉक्सी मीन्स टेंस्टिंग कहा जाता है। इसके किसी भी प्रारूप या संस्करण का प्रयोग मानक है। जिसके पास भी मोटर साइकिल है, गरीब नहीं है, जिस किसी के पास गैस कूकर है वह गरीब नहीं है।

पहचान करने के दूसरे तरीके का प्रयोग हमने भारत में किया है - समुदाय-आधारित लक्ष्यीकरण (कम्यूनिटी टार्गेटिंग)। किसी स्थानीय समुदाय के पास जाइए और उन्हें पूछिए कि इस इलाके में गरीब कौन हैं। वे आपको कुछ लोगों की सूची पकड़ाएंगे और इसमें आपको थोड़ी राजनैतिक प्रक्रिया से होकर गुजरना पड़ सकता है, शायद इसनें कुछ फेर-बदल हो और पंचायत आपको कहे कि भाई इसमें फलां-फलां लोग आ सकते हैं।

---

* कृषि बैंकिंग महाविद्यालय, पुणे में 19 जनवरी 2013 को प्रोफेसर अभिजित बनर्जी, एमआईटी, बोस्टन, यूएसए, द्वारा दिए गए प्रथम सुरेश तेंडुलकर स्मारक व्याख्यान की असंपादित प्रतिलिपि।

तीसरा तरीका वो है जो हमने नरेगा में अपनाया है। यह डायरेक्ट टार्गेटिंग है; लोगों को बस वहां होना भर है। यदि आपको भरी गर्मी में गड्ढे खोदने का काम करना है तो आपको पक्का मिलेगा। मनरेगा का फलसफा यही है। यह जानने में सर खपाने की जरूरत नहीं कि कौन से लोग गरीब हैं, हमें बस उन्हें नौकरी देनी है। अगर वे भरी गर्मी में गड्ढे खोदने का काम लेते हैं तो वे गरीब हुए क्योंकि और कोई तो ऐसा काम करना चाहेगा नहीं।

दुनिया भर में ये तीन (3) अलग-अलग मॉडल्स हैं। कई देशों में पहले समुदाय-आधारित टार्गेटिंग होती है, फिर कोई जाता है और उन पर पीएमटी करता है और चेक करता है कि समुदाय भले कह रहा हो कि फलां आदमी गरीब है, पर उसके पास दरअसल 3 गाड़ियां हैं यानी वह थोड़ा कम गरीब है। इस प्रकार इन पद्धतियों को मिलाकर यह काम किया जा सकता है। सो अपने पूरे भाषण में मैं यह बोलना चाहूँगा कि इनमें से कौन सबसे अच्छा काम करता है।

सवाल आसान नहीं है। भारत में कई कार्यक्रम हैं जैसे पीडीएस जो समुदाय-आधारित लक्ष्यीकरण (टार्गेटिंग) द्वारा अधिक टार्गेट किया जाता है और मनरेगा है जो स्व-लक्ष्यीकरण (सेल्फ टार्गेटिंग) है। कई और कारणों से इन दोनों में टार्गेटिंग की गुणवत्ता (क्वालिटी) अलग है। उनका कार्यान्वयन अलग अलग तरीके से होता है, उनका इतिहास और उन्हें चलाने वाले लोग अलग हैं। इसलिए आप यह नहीं कह सकते हैं कि कौन बेहतर है। यदि पहचान का तरीका एक हो और कार्यान्वित करने वाले लोग वही हों तब भी केवल अलग-अलग कार्यक्रमों की तुलना भर से इस बात का जवाब जानना मुश्किल होगा कि कौन बेहतर चलेगा क्योंकि उन्हें अलग ढंग से चलाया जाता है। यह चुनौती है।

फिर, कुछ देर मैं दूसरे प्रश्न पर भी बोलूंगा। कल्पना कीजिए कि मैं तय करता हूँ कि समुदाय आधारित टार्गेटिंग इस मायने में सर्वोत्तम है कि अभी भी इसे करने के कई तरीके हैं। समूचे समुदाय को एक मीटिंग में बुलाइए, मुश्किल काम है क्योंकि लोग अपने काम में लगे हुए हैं। पहले तो उनको एक कमरे में इकट्‌ठा करने में खासी मशक्कत करनी पड़ेगी, फिर उनको गरीबों की पहचान करने को कहिए या फिर आप केवल गाँव के नेताओं को ले लें और उनसे पूछ लें। आपको लगेगा कि ये तो और बुरा है क्योंकि नेता तो अपने लोगों को बढ़ावा दे सकते हैं; लेकिन दूसरी तरफ ये सस्ता भी है क्योंकि 400 लोगों के बदले आपका काम 10 ही से हो गया। तो चुनना आपको है - 400 लोग या 10 या फिर मनरेगा जो कि स्व-लक्ष्यीकरण (सेल्फ-टार्गेटिंग) वाला मामला है। हर दिन जाइए और सेल्फ टार्गेट कीजिए।

पर आप कुछ अलग भी कर सकते हैं। आप कह सकते हैं कि हर महीने आइए, ठप्पा लगाइए और पूरे महीने का पैसा पाइए। हर दिन काम पर आने की जरूरत नहीं है। इससे भी स्व-चयन (सेल्फ-सेलेक्शन) होगा। आप लोगों को दिन में एक बार के बदले महीने में एक बार बुलाकर सेल्फ सेलेक्शन को ज्यादा सीधा बना सकेंगे। यदि लोगों को पैसा ट्रांसफर कर दें तो ज्यादा आसान हो सकता है। इस प्रकार इन माडलों के बीच चुनाव है।

मैं यह बताने जा रहा हूँ कि इनमें से जो मॉडल आप समझें वो सबसे अच्छा है। मैं प्रयोगों के बारे में बोलूँगा, बड़े स्तर के क्षेत्र प्रयोग (फ़ील्ड एक्सपेरिमेंट्स)। अधिकांशतः गाँवों का चुनाव यादृच्छिक (रैंडम) ढंग से किया जाता है और चुने गए गाँवों में व्यवस्थागत स्तर पर कोई अंतर नहीं होता। उनमें से कुछ सेल्फ-टार्गेटेड होते हैं और फिर आपको देखना होता है कि क्या होता है जहां बेहतर टार्गेटिंग आपको मिलती है। मैं आपको भारत का एक उदाहरण दूँगा भारत में अपने काम का यह एक मात्र उदाहरण है, पर है रोचक।

यह कार्यक्रम घोर गरीबों की टार्गेटिंग के लिए है। इसे पश्चिम बंगाल में बंधन नामक एमएफआई द्वारा चलाया जाता है जिसमें समुदाय वाला रास्ता अपनाया जाता है। जहाँ गरीब रहते हैं, उनका नक्शा बनाकर और प्रत्यक्ष रूप से उनकी पहचान करके पूरे समुदाय को साथ लाया जाता है। इसे वे सेंसस से मिलाते हैं। तो इस कार्यक्रम से किस प्रकार का चयन (सेलेक्शन) हो रहा है। इसमें यह नहीं पूछा जा रहा है कि कौन गरीब है, बल्कि यह कि इन गरीबों में भी कौन सबसे ज्यादा गरीब है। यह प्रश्न जरा अलग है और ये लोग गाँव के औसत गरीबों की तुलना में अधिक गरीब हैं। यह याद रखना जरूरी है।

इस मामले में हमें लगा कि समावेशन त्रुटि (इनक्लूज़न एरर) कम होगी, इस अर्थ में कि जो गरीब नहीं हैं, उन्हें गरीबों में गिन लिया जाए। उनको लगभग ₹ 8000/- का मुफ्त सामान मिल रहा था - उन्हें गाय या पैसा मुफ्त में मिल रहा था। इस प्रकार काफी कुछ दिया जा रहा था और समग्र तौर पर गाँव के समुदाय में अमीर लोग शामिल नहीं थे। हुआ यह कि कई

समावेशन त्रुटियां (इनक्लूज़न एरर) हो गईं। मूलतः वे लोग बाहर हो गए जो गाँव की सीमा पर रहते थे। तो आदिवासी समुदाय के लोग और गाँव के हाशिये पर के लोग बाहर हो गए।

गाँव के समुदाय ने उन्हीं लोगों को लिया जिन्हें वे अपना समझते थे। लोगों की पहचान करने में वे तुलनात्मक रूप से ज्यादा अच्छे थे पर तब नहीं जब मामला वैसे लोगों का हो जिन्हें वे अपने समुदाय में नहीं गिनते। कुछ निर्धनतम लोग छूट गए। इससे बात को समझने में मदद मिल सकती है।

अब मैं दो (2) बड़े प्रयोगों के बारे में बोलना चाहूँगा जो हमने इंडोनेशिया में किए। वहाँ करने का कारण यह था कि इंडोनेशियाई सरकार ने हमें कहा था। वहाँ की सरकार बड़ी टेक्नोक्रैटिक है। आप उनके साथ कुछ समय तक काम करें तो वे कहेंगे कि हम इस पीमएटी को छोड़ना चाहते हैं यानी आप किसी और तरीके से एसेट डेटा जुटाइए या इस तरीके को किसी और किसी विषय पर लगाइए तो कैसा रहेगा। तो पूछा गया कि और समुदाय आँकड़ा पद्धति के मुकाबले पीएमटी कैसा है।

इंडोनेशिया की सरकार कभी-कभी तय करती है कि हर गरीब को कुछ पैसा दिया जाए। यह उन्हीं एकबारगी होने वाले कार्यक्रमों में एक था। यह बहुत बड़ी राशि नहीं थी। क्रय शक्ति समता (पर्चेजिंग पावर पैरिटी) पर प्रति दिन 2 डॉलर्स प्रति व्यक्ति उपभोग/खपत वाले लोगों को देने का विचार था। इसके लिए 640 गाँवों का यादृच्छिक रूप से चयन किया गया। इंडोनेशियाई गाँव, भारतीय, विशेषतः राजस्थान के गाँवों की तरह हैं। वहाँ की सरकार जो पीएमटी विधि अपनाती है, उसमें 49 सूचक (इंडिकेटर्स) हैं। किसी हाउसहोल्ड में जाइए, एक लिस्ट बनाइए कि इसके पास क्या-क्या चीजें है, ईंट की दीवार है या मिट्टी की, फूस या पुआल का छप्पर है या टिन की छत है, टीवी, मोटरबाइक आदि है कि नहीं। वे सब जोड़ते हैं और इसके आधार पर तय करते हैं कि यदि मोटरबाइक और टिन की छत है तो गरीब नहीं माने जाएंगे।

इस प्रकार कुछ नियम हैं और वे उनका वे प्रयोग करते हैं। हर घर (हाउसहोल्ड) में वे जाते हैं, डेटा जुटाते हैं और फिर ये नियम लगाते हैं। सरकार गणना करने वालों को यह एसेट डेटा जुटाने के लिए भेजती है। मूलतः इस डेटा से पूर्वघोषित अंक (स्कोर) निकल कर आते हैं, वे कहते हैं कि अगर आपके पास ये विशेषताएं हैं, तो सब है और यदि आपका स्कोर उतना कम है जितना चाहिए, तो आपको पैसा मिलेगा। सो वह एक तरीका है। ऐसा लगभग एक-तिहाई गाँवों में किया गया। दूसरा विकल्प था समुदाय पद्धति का। समुदाय पद्धति के दो रास्ते थे - एक था सभी घरों को बुलाने का और उन्हें आने के लिए प्रोत्साहित भी किया गया। हर घर (हाउसहोल्ड) को एक कार्ड के रूप में दिखाया गया। यदि आपको किसी हाउसहोल्ड को रैंक देना है तो एक धागे से कार्ड लटका दीजिए। यही उनका तरीका है। किसी और हाउसहोल्ड से गरीब हूँ तो उस हाउसहोल्ड के बाईं ओर, यदि उसकी तुलना में धनी हूँ तो मुझे दाहिनी ओर रखा जाएगा। इस प्रकार प्रत्येक हाउसहोल्ड को रैंक दिया जाता है।

दूसरा रास्ता है केवल उच्च वर्ग (एलिट्स) को बुलाने का। तीन समूह थे - 640 लोगों को 3 समूहों में बाँटा गया। एक समूह चला पीएमटी के रास्ते, दूसरा समुदाय मार्ग पर। इसके अलावा एक और रास्ता है जिसे मैं मिश्रित (हाइब्रिड) कहता हूँ - उनकी पहचान पहले समुदाय के लोगों ने की और फिर सरकार गई, वेरीफाई किया कि किनका चुनाव किया गया है और चेक किया कि सही लोग आए हैं या नहीं। तो सरकार की भूमिका थी छाँटने वाले की, जिन्हें वे गरीब नहीं समझते थे, उन्हें वे हटा सकते थे। तो यह इन दोनों का मिश्रण है। इसे 2008-09 में किया गया।

अब मूलभूत परिणाम ये रहा। खपत/उपभोग का वितरण इन दो (2) तरीकों -मिश्रित(हाइब्रिड) और समुदाय (कम्यूनिटी) - में एक जैसा दिखता है। लाल बिंदु वाली वक्र(कर्व) और नीली कर्व एक समान नजर आती है। पीएमटी काफी अलग है और औसतन बेहतर है। सरकारी तरीका समुदाय (कम्यूनिटी) तरीके से बेहतर है। यदि आप समुदाय (कम्यूनिटी) को कहें कि औसतन कुछ कम गरीबों को लेना है, और यदि आप देखें कि हरी वक्र(ग्रीन कर्व) नीली और लाल वक्र के बाईं ओर ऊपर की तरफ़ जा रही है तो यह बताता है कि गरीबों के चयन का काम सरकार बेहतर कर रही है। वैसे कोई खास अंतर नहीं है।

मूलतः यदि आप गलत टार्गेटिंग के मापों को देखें, यानी कितने लोग जो गरीब नहीं थे, गरीबों में शामिल हो गए और कितने गरीब ऐसे थे जो गरीबों से इतर लोगों में चले गए, तो आपको 3 प्रतिशत का अंतर मिलेगा। यानी यदि आप सरकारी तरीके को अपनाते हैं तो गलत लक्षित (मिसटार्गेटेड) लोगों का अनुपात 3 प्रतिशत कम हो जाता है। इस प्रकार आप कह

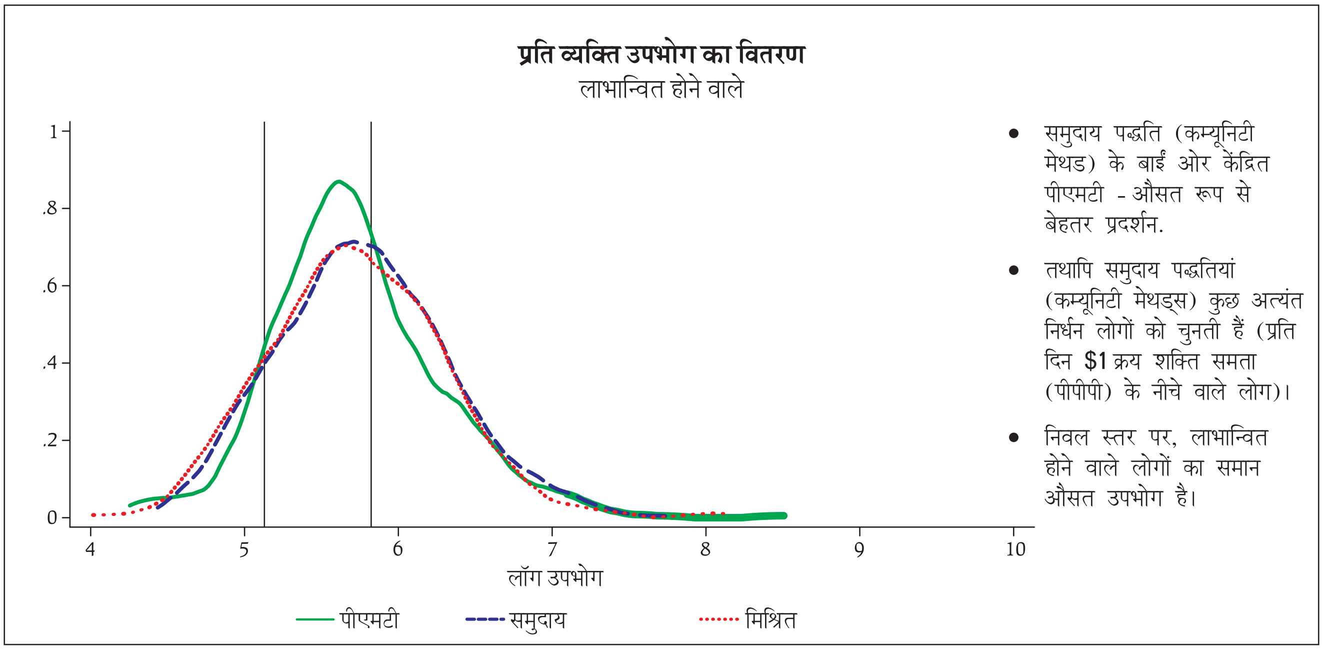

सकते हैं कि गरीबों की पहचान में समुदाय का प्रदर्शन कुछ खराब रहा।

वास्तव में, समुदाय पद्धति (कम्यूनिटी मेथड) निर्धनतम - जो लोग वास्तव में गरीबी रेखा के नीचे हैं- की पहचान करने में बेहतर है। तथापि, कुल मिलाकर देखें तो, यह बेहतर नहीं है। वहाँ की सरकार की दिलचस्पी इसी में थी। हमने भी उनसे पूछा कि क्या आप परिणाम से खुश हैं। टार्गेटिंग हो जाने के बाद पैसा बाँटा गया। यह सब होने के छह महीने के बाद, हम गए और उनसे पूछा कि आपको कौन सा तरीका अच्छा लगा। समुदाय (कम्यूनिटी) को अपना तरीका पसंद था। इसके बाद हम प्रत्येक हाउसहोल्ड के पास गए और उनको प्राइवेटली पूछा कि कौन सा तरीका उनको पसंद आया और कौन सा नहीं। हमने पूछा कि 1 से 10 के स्केल पर परिणाम को आप कहाँ रखेंगे और लोग समुदाय वाले परिणाम को सरकारी परिणाम से ऊँचा स्थान दे रहे थे। लोगों को समुदाय परिणाम (कम्यूनिटी आउटकम) सही लगा जबकि आप देख सकते हैं कि गरीबों की पहचान करने में तुलनात्मक रूप से यह ज्यादा ख़राब है।

तो सरकार ने बेहतर या अलग कैसे किया? पहली संभावना है कि समुदाय (कम्यूनिटी) पर ऊँचे लोग काबिज हैं। ऊँचे लोग बस एक निर्णय ले लेते हैं और फिर इसे लागू कर देते हैं। मैंने कहा कि मैं दो भिन्न स्वरूपों को देखूँगा - एक, पूरे कम्यूनिटी को आने को कह कर और दूसरा गाँव के केवल 10 उच्च अधिकारियों को बुलाकर। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप किसे बुलाते हैं। या तो आप केवल ग्राम अधिकारियों को बुलाइए या शेष को, वे उन्हीं लोगों को चुनते हैं। ऐसा नहीं है कि उच्च वर्ग ने इस पर कब्जा कर लिया है, बल्कि किसी न किसी तरह वे अपने मित्रों को इसमें जोड़ देते हैं और आपके सामने एक अलग परिणाम आ जाता है।

दूसरी चीज जो हमने की वो ये थी कि लोग जिस क्रम में रैंक किए गए थे हमने उसे यादृच्छिक कर दिया। 400 लोग हैं और आपको उन्हें एक के बाद रैंक करना है। फिर आपने कैसे किया? पहले रैंक पर आने वाले को हमने यादृच्छिक ढंग (रैंडमली) से चुना और अंत में होता यह है कि समुदाय के लोग पहले आधे घंटे तो अच्छा करते हैं और फिर उसके बाद वे थक जाते हैं और ग़लतियां बढ़ती चली जाती हैं। अंत में, वे बस यही कर रहे थे कि इसे कहीं भी डाल दो। समुदाय इस चीज से काफी थक गया था। और हम उनसे बस उन लोगों को रैंक करने की डिमांड कर रहे थे जिन्हें, वे हमारे मुताबिक, जरूर जानते होंगे। कौन गरीब है उनके लिए यह कहना आसान होता, पर चूँकि हमने क्रम को बेतरतीब (रैंडमाइज़) कर दिया, उनके लिए यह मुश्किल हो गया।

हमने साफ-साफ देखा वहाँ पर क्या हो रहा था? इसे देखने का एक तरीका यह है कि गाँव कैसे इनको रैंक करता है और वे अपने आपको कैसे रैंक करते हैं, इन दोनों में सह-संबंधों को देखा जाए। यह पूछे जाने पर कि कि क्या आप बहुत गरीब हैं, कुछ लोग हां कहते हैं और कुछ लोग नहीं। पर होता यह है कि लोगों के स्वयं के विवरण को लेकर सरकार की तुलना में कम्यूनिटी काफी अधिक संवेदनशील है। दूसरे तरीके में यह

सूचना पूरी तरह अनदेखी कर दी जाती है। हमने इसे लोगों के कथन से जोड़ कर देखा।

सरकारी तरीका जो कर रहा था, समुदाय के लक्ष्य उससे कुछ अलग थे। दिलचस्प बात है कि हाउसहोल्ड के उन गुणों को समुदाय चिह्नित कर रहा था जिसे सरकारी पद्धति में शामिल नहीं किया जा रहा था। सरकारी वाले में मुख्यतः प्रति व्यक्ति उपभोग को लिया जाता है, पर दूसरी चीजों का भी महत्त्व है। आप सुस्त हैं कि नहीं, मायने रखता है। समुदाय सुस्त लोगों के खिलाफ है। जिन लोगों ने उच्च शिक्षा पा ली है, पर खुद कमाते नहीं और दूसरों की मेहनत का खा रहे हैं, ऐसे लोगों के बारे में समुदाय का सोचना है कि इन्हें गरीब नहीं माना जाना चाहिए। इस प्रकार किसे गरीब कहा जाए, इसको लेकर समुदाय के अपने विचार हैं।

यदि किसी ने हाई स्कूल पास किया है और दूसरे ने कोई शिक्षा नहीं पाई और वे दोनों बराबर कमा रहे हैं, तो समुदाय की दृष्टि में जिसने हाई स्कूल तक की शिक्षा पाई है, वह सुस्त है और इसीलिए जितना उसे कमाना चाहिए वह उतना नहीं कमा रहा। इस प्रकार वह गरीब नहीं है। एक तरह से वे उपभोग को नहीं देख रहे हैं, बल्कि कौन गरीब है, इसके बारे में वे नीतिगत निर्णय ले रहे हैं। दूसरी तरफ, यदि उपभोग स्तर समान हो तब भी, किसी को जैसे कि एक विधवा को उस स्तर पर आने में बहुत परिश्रम करना पड़ा होगा; तो उसे वे पुरस्कृत करेंगे, जैसे कि अगर आप विकलांग हैं और आपके उपभोग का स्तर एक सामान्य व्यक्ति के बराबर है जिसे कोई अक्षमता नहीं है, तो संभव है कि आप गरीबों में गिने जाएंगे।

यानी वे उपभोग के परे देख रहे हैं। यह तथ्य दिलचस्प है क्योंकि समुदाय का काम अच्छा नहीं होने या इससे सरकार के लक्ष्यों को पूरा नहीं हो पाने का कारण केवल यह नहीं, जैसा कि मैंने कहा था, कि वे थक जाते हैं, पर अहम पक्ष यह है कि गरीब कौन है इस बात को लेकर उनका भी नजरिया अलग है। इसमें नीतिगत निर्णय शामिल है। हम नीतिगत निर्णय से सहमत या असहमत हो सकते हैं। कम्यूनिटी वह नहीं कर रही जो सरकार कह रही है। तो यह महत्त्वपूर्ण परिणाम ध्यान में रखना होगा।

यदि आप किसी के उपभोग रैंक को देखें, अगर समुदाय कहे कि यह बंदा गरीब है तो क्या इस बात में पीएमटी में दर्ज सूचना से ज्यादा कुछ है। हम जानते हैं कि उत्तर है हाँ और इस प्रकार समुदाय बता पाता है कि, भले ही इस व्यक्ति के पास मोटरबाइक हो, पर वास्तव में वह धनी नहीं है। दरअसल वह गरीब है। इस अनुमान पर समुदाय का काम बेहतर है। लगता है उनकी जानकारी बेहतर है। वे जानकारी का प्रयोग वैसे कर रहे हैं, जैसा हम चाहते हैं कि वे करें।

पहला निष्कर्ष यह है कि समुदाय खुद चुनाव करे तो उनको खुशी होती है। मुझे लगता है कि उनका सोचना यह है कि हमारे यहाँ कौन गरीब हैं हम जानते हैं, आप नहीं। तो आप उन्हें करने देंगे तो वे ज्यादा खुश होंगे। आप यह कह सकते हैं कि रैंकिंग करना उनके लिए आसान नहीं है। वे क्षुद्रता पर उतर आते हैं, गलतियां करने लगते हैं। यानी समस्या दोनों मॉडलों में है। यदि उच्च वर्ग को तय करने दें तो वे भी समुदाय के बाकी लोगों की तरह निर्णय लेते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि समुदाय का काम ख़राब नहीं है और इसे करने में उन्हें खुशी भी होती है।

अब अगला प्रश्न है कि मनरेगा जैसे स्व-चयन वाले तरीके की तुलना में सरकारी चयन और पीएमटी पद्धति कैसी है। स्व-चयन का आशय एक तरह से यह हो जाता है कि जो अमीर हैं, उनको लाइन में खड़े होना और गड्ढे खोदना समय की बर्बादी लगता है। वे इससे भी ज्यादा उत्पादक (प्रोडक्टिव) कार्य कर रहे होंगे और उन्हें आराम फरमाना पसंद है। चंद रुपयों के लिए वे धूप में, लाइन में खड़े होने या गड्ढा खोदने नहीं जाएंगे, वे कुछ और करके कमा लेंगे। कमाना नहीं तो बैठकर टीवी देख सकते हैं। ऐसा करने की उनके पास कोई वजह नहीं। स्व-चयन (सेल्फ-सेलेक्शन) में यही मूलभूत सिद्धांत है। यही कारण है कि हमें लगता है कि स्कीम चलनी चाहिए।

मामला हमेशा ऐसा नहीं होता। यदि मैं आपको कहूँ कि आज आपको जाना है, लाइन में खड़े होना है और पैसा भविष्य में मिलेगा, तो आप गरीब होंगे तो आपके पास खड़े होने का समय नहीं होगा क्योंकि आज आपके पास खाना नहीं है। ऐसे में चिंता हो सकती है कि गरीब गिनती से छूट जाएंगे। दूसरी चिंता यह है कि निर्धनतम लोगों में प्रायः वैसे लोग होते हैं जिनको और भी कई समस्याएं होती हैं। जैसे, कई बच्चे और अकेली औरत या बच्चे कई हों और पति शराबी। ब्च्चों का क्या किया जाएगा? कुछ मनरेगा कार्यक्रमों में क्रेच की सुविधाएं होती हैं पर अधिकांश में नहीं हैं। इस प्रकार सेल्फ टार्गेटिंग गरीब को ज्यादा महंगा पड़ता है।

जहाँ तक गरीब से इतर लोगों का प्रश्न है, उनके पास अच्छा सोशल नेटवर्क है और कनेक्शन है। कोई रिश्तेदार होगा जो ब्च्चों की देखभाल कर सकता है। गरीब प्रायः सामाजिक

तौर पर अलग-थलग होते हैं, उन्हें ऐसी मदद करने वाला नहीं मिलेगा। इस प्रकार सेल्फ सेलेक्शन से गरीबों को हानि हो सकती है। चिंताएं इस बात को लेकर भी हैं कि यह पक्का नहीं कि आपको सही प्रकार का स्व-चयन (सेल्फ सेलेक्शन) मिलेगा। इसलिए पिछले कार्यक्रम के परिणाम देने के बाद हमने यह प्रयोग इंडोनेशिया के तीन (3) प्रदेशों में 400 गाँवों में फिर से किया।

इस उदार कार्यक्रम में लोगों को उनके वार्षिक उपभोग का 11% मुफ्त में 6 वर्षों तक मिलता है, अर्थात् 6 वर्षों तक प्रतिवर्ष 150 डॉलर। गरीबों के लिए यह एक बड़ी राशि है। प्रश्न था कि यदि केवल सेल्फ सेलेक्शन है तो हम यह कार्य कैसे करें। गाँवों को स्व-चयन (सेल्फ सेलेक्शन) के लिए यादृच्छिक रूप से (रैंडमली) चुना जाता है। वैसे यह मनरेगा से काफी अलग है अर्थात् इसमें आपको पैसा लेने के लिए हर दिन जाना है। शुरू में इंडोनेशियाई सरकार कार्य-स्थल बनाने को तैयार नहीं हो रही थी। हमने एक ऑफिस बनाया जहाँ लोग आ सकें और हस्ताक्षर कर सकें। लोगों को कीमत तो चुकानी होगी क्योंकि संभव है 3 से 4 घंटे तक लाइन में खड़ा रहने पड़े।

एक बार आपने हस्ताक्षर (साइन) किया, तो कोई आपके घर आएगा और जाँचेगा कि आप वास्तव में पात्र हैं या नहीं। अगर आपको नहीं लगता कि आपको मिलेगा, तो साइन करने की जहमत मत उठाइए। हम आएंगे और चेक करेंगे, बस इसीलिए साइन करें, इसका कोई मतलब नहीं। चूँकि आपको लाइन में 3 से 4 घंटे तक खड़ा रहना है, तो आपको आने लायक अच्छा खासा प्रोत्साहन भी तो चाहिए। एक आदमी आपसे कुछ सवाल करेगा और कंप्यूटर में डेटा भरेगा और कुछ जगहों में आपको अपने घर से 2 से 3 किलोमीटर दूर जाना होता है। तो कुछ तो लागत है, बहुत विशाल न हो, पर यह शून्य भी नहीं है। सो पहला प्रश्न यह है कि कौन स्व-चयन (सेल्फ सेलेक्ट) करता है।

इसे करने का दूसरा तरीका सूचना है जो अपने बारे में मेरे पास है और जिसे और कोई नहीं जानता। हो सकता है मेरे पास एक मोटर बाइक हो और एक अच्छा घर हो, लेकिन मेरी नौकरी चली गई है। ये बात तो सरकार की चेकलिस्ट में कहीं होने वाली नहीं है। तो सेल्फ टार्गेटिंग का एक लाभ यह है कि जरूरत हो तो मैं आऊँगा, जरूरत नहीं हो तो नहीं आऊँगा। हर दिन सरकार को यह पता लगाने की जरूरत नहीं कि मेरी नौकरी है या गई। इस प्रकार इसमें लचीलापन है।

हरी लाइन आपको आपके पीएमटी स्कोर की संभाव्यता दर्शाती है, आपका एसेट स्कोर जिसका प्रयोग सरकार आपको शामिल करने या नहीं करने के लिए करती है। तो अगर मैं आपका पीएमटी स्कोर मापूँ और यह 12 से 14 हो जाता है, तो उत्तर यह है कि संभावना काफी नीचे चली जाती है। जहाँ लगभग 60% लोग आते हैं वहीं पीएमटी स्कोर के 14 होते-होते 0% लोग आते हैं। यहाँ आप सबसे ख़राब एसेट वाले लोगों को चुन रहे हैं। कार्यक्रम भले ही यह बड़ा आकर्षक है, पर आते केवल 60% लोग हैं। यह ध्यान में रखने वाली बात है। यदि आप वास्तविक उपभोग का रिग्रेशन रन करें तो वहाँ आपका पीएमटी अंक त्रुटि अंक (एरर स्कोर) होगा जो बताएगा कि यह व्यक्ति गरीब है और यह व्यक्ति अपेक्षाकृत धनी।

तो कल्पना कीजिए मैं एसेट्स की लिस्ट ले लेता हूँ और उपभोग का पूर्वानुमान लगाता हूँ, तो एक पूर्वानुमान त्रुटि होगी जो कहती है कि मॉडल परफेक्ट नहीं है। मोटरबाइक वाला व्यक्ति उन दूसरे व्यक्तियों की तुलना में ज्यादा गरीब है जिनके पास मोटरबाइक नहीं है। क्या यह त्रुटि पूर्वानुमान देती है कि आप आएंगे या नहीं? उत्तर है हां। यदि अपने एसेट्स के आधार पर आप जितना दिखते हैं, उसके कहीं ज्यादा धनी हैं तो आप नहीं आते। यदि अपने एसेट्स के आधार पर जितना दिखते हैं, उससे आप ज्यादा गरीब हैं तो आप हाजिर हो जाते हैं। ये होता है जब आप स्व-लक्ष्यीकरण (सेल्फ-टार्गेटिंग) की तुलना पीएमटी से करते हैं। नारंगी छाप वाली पीली लाइन पीएमटी है और काली लाइन सेल्फ - टार्गेटिंग है और यह प्रति व्यक्ति

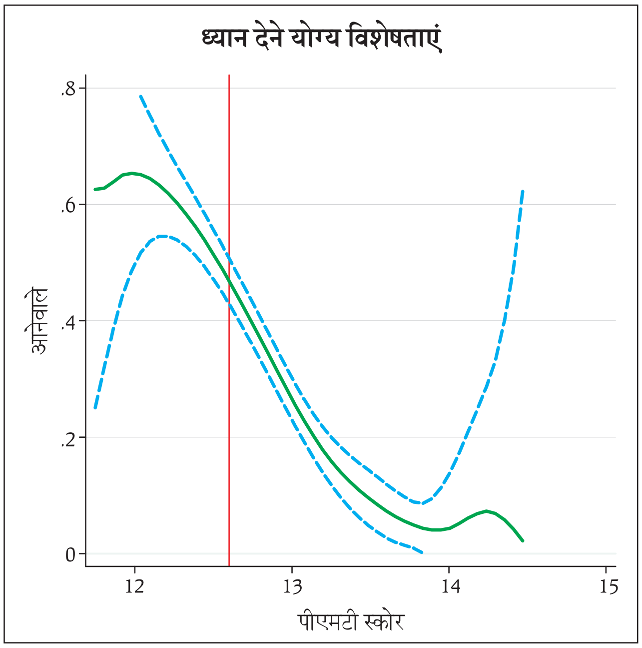

उपभोग है इसलिए वितरण सीधे बाईं और है। उस स्तर के नीचे जो लोग हैं, संभवतः 13 के नीचे हैं। यदि आप 13 पर सीधी लाइन खींचें, तो आप 6.60 प्रतिशत वक्र (कर्व) पर बिंदु को छूते हैं। जो लोग सेल्फ-टार्गेटिंग के लिए आते हैं वे 13.55 प्रतिशत के नीचे हैं, और जो पीएमटी के लिए आते हैं, वे 13 के नीचे हैं।

इस प्रकार दूसरे शब्दों में यह पक्के गरीब लोगों को टार्गेट करता है। मान लिया जाए सेल्फ टार्गेटिंग द्वारा टार्गेट होने वाले लोग पक्के गरीब हैं, वितरण के हर बिंदू पर लोग हैं, सो हर जिले में हर जगह पर हमें बेहतर टार्गेटिंग मिल रही है। इसलिए ठीक से की गई सेल्फ टार्गेटिंग बेहतर टार्गेट करता है, कर्व ऐसा कहता है। सरकारी तरीके का इस्तेमाल बेहतर है। याद रहे लागत कम है, कल्पना कीजिए ऑफिस में लगाई गई बस एक दुपहर की। उस पर हमें काफी अच्छी टार्गेटिंग मिलती है, तो समाचार अच्छा है और समावेश और अपवर्जन त्रुटि (इनक्लूज़न एंड एक्सक्लूज़न एरर) कम हो जाती है।

मैं विस्तार से समझाने में समय नहीं लगाना चाहता, पर इनक्लूज़न एरर के कम होने का अर्थ है कि सेल्फ टार्गेटिंग में धनी लोग अधिक एप्लाइ नहीं करते और गरीब अधिक एप्लाइ करते हैं। इस प्रकार दोनों कारणों से वितरण बाईं ओर शिफ्ट होता है। धनी जाते हैं और गरीब आते हैं, तो ये अच्छी बात है।

हम लागत का अनुमान लगाने के लिए आने वाले व्यक्ति के औसत पारिश्रमिक को देखते हैं, 4 घंटे लाइन में खड़े होने की यही कीमत उसे चुकानी पड़ती है। उन चार घंटों में वह कुछ अधिक उत्पादक कार्य कर सकता था। जिस लागत को हम जोड़ते हैं, वह लागत पीएमटी की कीमत से ज्यादा है। मूलतः उसमें वह कीमत सरकार चुकाती है। गणना करने वाला आता है और मान लेते हैं 50 मिनटों तक आपसे प्रश्न पूछता है, यानि आपका इतना ही समय खर्च होता है। इस मायने में सरकारी सिस्टम में खर्च ज्यादा होता है। तो अगर आप उनको जोड़ें, तो स्पष्ट है कि निवल लागत सेल्फ टार्गेटिंग के लिए कम है। इस अर्थ में, सेल्फ-टार्गेटिंग ज्यादा सक्षम है क्योंकि इसमें खर्च का अधिक बोझ लाभार्थी पर पड़ता है पर सरकार के लिए लागत काफी कम है और इस प्रकार कुल लागत कम है।

अब एक आखिरी प्रश्न, जैसा कि मैंने कहा, अगर हम ख़र्च बढ़ा दें तो क्या सेल्फ-टार्गेटिंग बेहतर होगी। तो हमने एक काम किया - रैंडम आधार पर कुछ गाँवों को हमने कम लागत पर रखा क्योंकि उनके लिए हस्ताक्षर का स्थान घर के अगल-बगल में रखा गया था और कुछ गाँव ऐसे थे जिनमें साइन करने के लिए लोगों को 3 किलो मीटर दूर जाना होता था। मनरेगा जैसा कार्य करने का सिद्धांत कहता है कि लागत अधिक हो तो चयन सुधरता है। छोटी लागत तो कोई भी उठा सकता है। जब कीमत अधिक चुकानी हो तो जो पाने के लिए वास्तव में छटपटा रहे हैं, वे ही वह कीमत देने को तैयार होंगे। पर अनुभव यह बताता है कि जब आप दूरी बढ़ा देते हैं तो लगभग हर कोई बाहर निकल जाता है। ज्यादा गरीब अधिक निकलते हैं, और तुलनात्मक रुप से सबसे धनी वर्ग भी बाहर निकल आता है। यानी कोई चयन (सेलेक्शन) हुआ नहीं, बस कुछ कम लोग आए। तो अगर कड़ाई से विचारें, तो दूरी बढ़ाना सबसे बुरी बात है। इस प्रकार, छोटी कीमत अच्छा काम करती है एवं इसमें कीमत और बढ़ाने से कोई फायदा नहीं होता, बस सबसे ख़राब चयन (सेलेक्शन) होता है।

संक्षेप में, कम्यूनिटी टार्गेटिंग ने सरकारी पद्धति जैसा काम किया, उससे कुछ ख़राब कह लीजिए, शायद इसलिए कि सरकार ढेर सारी स्थानीय जानकारियों को अनदेखा करती है। जरूरी नहीं कि उपभोग संकेतक सही तरीका हो। स्व-लक्ष्यीकरण (सेल्फ टार्गेटिंग) दोनों से बेहतर परिणाम देता है। तो यदि इन दोनों कारकों को मैं जोड़ दूँ, तो उससे अभ्यर्थियों पर कुछ और कीमत का बोझ तो पड़ ही जाता है। जैसा कि इतने आकर्षक उस कार्यक्रम में भी केवल 60 प्रतिशत सर्वाधिक निर्धन ही आए, यानि इन कार्यक्रमों में कुछ ऐसा है जिससे बड़ी संख्या में निर्धनतम लोग छूट जा रहे हैं। लोगों द्वारा अपने नाम दर्ज कराने को लेकर जो समस्या है, वो हमने हल नहीं की है, और जब नाम दर्ज करने का काम आप लोगों पर छोड़ देते हैं तो लगता है प्रोत्साहन के बावजूद वे ऐसा नहीं कर रहे हैं। यह मनरेगा टाइप के कार्यक्रम की ओर जाने का तर्क नहीं है, तर्क इस बात के लिए है कि किसी तरह उनके लिए नाम दर्ज कराना आसान बनाइए जो सबसे गरीब हैं। इसे कैसे किया जाए, अभी हम उसी पर काम कर रहे हैं जिसमें इसका ध्यान हो कि निर्धनतम 40 प्रतिशत लोग छूट रहे हैं। प्रश्न है कि कैसे उन्हें शामिल किया जाए, अंदर लाया जाए। इससे आपको इस बात की ठीक-ठाक समझ मिलती है कि सेल्फ टार्गेटिंग अच्छा खासा कारगर है और छोटी लागत जोड़कर आपको अच्छी सेल्फ-टार्गेटिंग मिल सकती है। हर दिन जाने की जरूरत नहीं। सीधे कैश ट्रांसफर करने के बारे में जो बात सरकार कर रही है, उसके बारे में मेरा अनुमान है कि वे ऐसा कर सकते हैं और ऐसा प्रयोग कर सकते हैं जिसमें आपको केवल एक दिन

आकर हस्ताक्षर या कुछ करने आना होगा, बस महीने में एक बार आइए, ठप्पा लगाइए और पूरे महीने का पैसा पाइए। मुझे लगता है कि नरेगा वाले सेल्फ टार्गेटिंग तरीके में लोगों पर कुछ और लागत लगाकर काफी प्रभावी बनाया जा सकता है और निर्धनतम लोगों को बाहर छूटने से बचाया जा सकता है।

इस प्रकार के अनुसंधान से आपको इसका बोध होता है कि किस प्रकार यह शोध प्रोफेसर तेंडुलकर वाले अनुसंधान का पूरक है। बस इसके उस तरफ की कोशिश इस मायने में कि कैसे मैं गरीबी रेखा को इस तरह बनाऊँ कि जब इस रेखा के नीचे के लोगों की पहचान हो तो सही लोगों की पहचान हो।

ये सभी पूरक किस्म के रास्ते हैं और मुझे खुशी है कि मैं यहाँ आया और इस विषय पर मैंने कुछ कहा।

धन्यवाद।